5-1

K. N. Shrinivastava
K. N. Shrinivastava

K. N. Shrinivastava

A. N. Visvanath Iyer;

श्रीजगन्नाथवल्लभनाटकम्।

श्री राधाकृष्ण रास क्रीडा विषयम्।

श्रीयुत कविवर रामानन्द राय प्रणीतम्।

——०:*:०——

परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री श्रीमत् स्वामि प्रकाशानन्द
सरस्वती पूज्य पाद शिष्येण।

कलियुग पावनावतार श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभु चरणाब्ज
चंचरीकेण श्री राधारमण चरण दास
सिद्ध महात्मनः कृपापात्रेण।

श्री नित्यस्वरूप ब्रह्मचारिणा।

संपाद्य प्रकाशितम्।

श्री वृन्दावन निवासि पण्डित लक्ष्मणा चार्येण शोधितम् क-

श्री माध्व गौडेश्वर श्री बालकृष्ण गोस्वामिना
प्राकृत भाषयानूदितम्।

तच्च

संपादकेन श्रीवृन्दावन "श्रीदेवकीनन्दन" यंत्रे मुद्रितम्

१०००]   सं० १९५८ ज्येष्ठ शुद्ध १३   [मूल्य ॥।)

भूमिका ।

यद्यपिकाव्यनाटकयोः शब्दभेदेनग्रंथरचनशैलीभेदादिनाचपा थंक्येनव्यवहारः क्रियतेप्राज्ञैरपि तथापिकथादीनांसाम्येनसाहित्य काराणां सर्वेषां काव्यलक्षणादि निरूपणग्रंथेष्वेवनाटकानामपिलक्ष णादिनिरूपणसत्त्वेनचानयोरेककोटीनिवेशेऽपिन्यायवैशेषिकयोरिवन कांचनक्षतिंपश्यामस्तथाचकाव्यप्रयोजनेनैवनाटकस्यापिप्रयोजनमुक्तं भवतीतिविभावनीयमत्र"काव्यंयशसेऽर्थकृतेशिवेतरक्षतये इत्यादि नाकाव्यफलस्यकाव्यप्रकाशादिषूक्तत्वेन-काव्यालापांश्चवर्जयेदितिव चनमस्तत्काव्य विषयतयानिर्व्यूढमयतः "काव्यालापाश्चयेकेचि द्गीतकान्यखिलान्यपि-शब्दमूर्तिधरस्यैतेविष्णोरंशामहात्मन" इति विषयवंशप्रतिपादकंसाहित्यदर्पणाद्युद्धृतं पुराणवचनं जागर्तितेनाह एप ॰काव्यनाटकयोःप्रसिद्धमेव दृष्टफलेऽपियथान्यायव्याकरणादौ क्लेशमंतरासुखं नोपलभ्यते तथानात्रप्रत्युत"वाक्यंरसात्मकं मितितल्लक्षणाच्छ्रवणमात्रेण रसप्रदत्वंस्फुटमेवोप लभामहे' काव्यनाटकादीनां भगवत्संबंधिनामैहलौकिक पारलौकिक तुत्वं नापरोक्षंविदुषामितीदं श्रीजगन्नाथवल्लभनाटकं बंगाक्षरैः द्रितमपिएतद्देशाक्षरैःपुनर्मुद्रितम् अस्मिश्चांकपंचकं विद्यतेतत्र प्रथ ऽङ्केनटनटी विदूषकाणां संवादपूर्वक प्रस्तावनयासह पूर्वराग नि पणमस्ति द्वितीयेभावपरीक्षानिरूपणम् तृतीयेभावप्रकाशनि पणंचतुर्थे श्रीराधिकाया अभिसार निरूपणम् पंचमेश्रीराधाकृष्ण योः संमेलनपूर्वक विहारनिरूपणम् इदंचकेवलं नाटकमेव रभवति अपितुरागपद्ययुतत्वेन गानसाधनमपिभवतीति किंस्यादतिप्र मया एतच्च प्रतापरुद्रनृपतिपरितोषाय रामानंदरायकविनाविरचितं ।

समर्पणम् ॥

श्रीगौरांगो जयति ।

अखिल भुवनवंद्येधाम्निवृंदावनेऽस्मि
न्निखिलविनतराधा माधवस्यांघ्रिसेवी ।
जनहितधृतजन्मा द्वैतवंशोद्भवत्वा
जगतिविदितकीर्ती ... :सुविद्वा ... ॥१

... ाह्लूदाह्ली ॥ ७ ॥

कलिपावन वैष्ण...

... ा लैता ॥ १ ॥

द्रघुनंदननामक...

... न्द्रो विजयते ॥

समवाप्तबुभुत्सि...

... दी.

वनमालि वह्लाद...

... ा में निषाद प्रभृति सातों स्वरों से युक्त वीणा,
रा... द्यों के सह योग से उत्कृष्ट संगीत हो रहा है ॥
...ङ्ग हुई तनुलता में आलम्बको प्राप्त गोपांगनाओं के
...र्द्धित हो रहा है ।

...ं जो सखाओं की करताल ध्वनि और नूपुरों की झनकार
... हो रहा है. एसा मुरारी (श्री कृष्ण) का नृत्य त्रिभुवन
... को वर्द्धित करै ॥ १ ॥

कृष्ण: । धिङ्मुर्ख अलं परिहासेन ।
विदू । भो अदि अह्माणं पिअ वयस्सग्स हथ्थेल-
इडू अजुअलं तुए दादव्वं पिअवस्स तथ्थ गदुअ
मअणं निराकरिस्सदि ॥ ३२ ॥
मद । (कर्णं दत्वा) अये निसृष्टार्थेयं दूती ।
यतः इयं तत्तद्वचो वृन्दावने माधव सन्निधौ
राधा रूप कथा व्याजा दुवाचा सत्ति कोविदा ॥
(निरूप्य विहस्य ।)

भवति अस्माकं प्रियवयस्य हस्ते लड्डूक युगलं तया दात-
व्यं प्रिय वयस्य तत्र गत्वा मदनं निराकरिष्यति ॥ ३२ ॥

कृष्ण । अरे मूर्ख ? अब परिहास का प्रयोजन नहीं है।

विदू । हे शशि मुखी ? तुम हमारे इस प्रिय मित्र के [illegible] दो लड्डू देओ. जिससे ये वहीं जाकर मदन को पराजित करै [illegible] मद लताओं में छिपकर कान देकर अहो ? ये दूती आदेशा[illegible]सार ही कार्य को करती है. इसी से ये दूति का वृन्दावन मे श्रीकृ[illegible] सं जो जो वाक्य कह रही है. उन वाक्यों मे छल पूर्वक श्रीराधि[illegible]का ही के रूप लावण्य का वर्णन करती है।(निरूपणांतर उच्च हास्य कर के) अहो ? शशि मुखी के विकशित कमल मधु धारा के समान वाक्यों को श्रवण करते ही श्रीकृष्ण का मत्तगजेन्द्र के समान शिर कम्पित होने लगा. एवं मदनावेश से विवस होकर अपने संपूर्ण गुप्त भाव को प्रसन्न वदन से प्रकट कर दिया.

अमुष्याः प्रोन्मीलत् कमल मधु धारा इव गिरो निपीय क्षीवत्वं गत इव चलन्मौलि रधिकं। उदञ्चत् कामोऽपि स्व हृदय कला गोपन परोहरिः स्वैरं स्वैरं स्मित सुभग मूचे कथमिदं ॥ तद्भवतु अति भूमिं गतो रागो माधुर्य मात्रहति ॥ ३३ ॥

कृष्णः। पुनरपि पत्रिकां वाचयित्वा सखि सम्यगिदं नावकलितम्। गोपालबालकवृतो यमुनातटान्ते वृन्दावने किमपि केलिकलां भजामि। कस्मादियं दिशि दिशि स्फुटरूपभाजं मामेव पश्यति कुरंग किशोर नेत्रा ॥ ३४ ॥

मे किस प्रकार से है सो भी कहो ये अनुराग असीनरूपसे बढ़कर माधुर्य प्रदान करे। ३१।

कृष्ण (दूसरी वार पत्रिका पढ़कर के) सखि। इसका भाव अच्छी तरह से मालूम नही भया।

हम तो गोप बालकों को संग लेकर वृन्दावनमे यमुना तट पर क्रीडा करते रहते हैं. किस प्रकार इस मृग नयनी रूपशाली राधिका ने हम को देखा। ३४।

साम गुज्जरी रागेण।

गोपकुमार समाजमिमं सखि पृच्छ कदानुगतोऽहं कथमिव मामनुपश्यति दिशि दिशि कथमिव करुयति मोहम्। सखि परिहर वचनविलासं। गोप शिशूनां विदित मिदं मम जनयति गुरुपरिहासं॥ ध्रु॥ यदिच कुलाचलयापि कुल स्थितिरनया परिहरणीया। किमिति तदामयि रतिरतिविकला वाले किल करणीया। गजपति रुद्र मुदे मधुसूदन वचनमिदं रसिकेषु। रामानंद राय कवि भणितं जनयतु मुदमखिलेषु॥ ३५॥

सखि ? इन गोप वालकों से पूंछो कि हम कव वहां गए, किस प्रकार से राधिका ने हम को देखा. क्योंकि उनका मोह उत्पन्न होता है. सखि ? वाग्विलास हास्य को त्याग करो. यदि ये गोप वालक इसको सुनेंगे तो हमारा अत्यन्त हास्य करेंगे. यदि वे अपनी कुल मर्यादा को विसर्जन करतीं है.

हमसे उनका अयोग्य रति विधान करना उचित नहीं है। गज पति प्रताप रुद्रकी शांति के निमित्त, रामानन्द राय रचितये मधुसूदन के वचन रसिक समाज मे आनंद वर्धन करें। ३५।

शशि । (स्वगतं) अहो पिअसहीए अत्थाणा णुराओ ता किं एत्थ कादव्वं ॥ ३६ ॥

विदू । भो किं एदाए दुट्ठ गोवीधीदाए भणिदाए वअस्स पेक्ख पेक्ख ॥

रइअर चलिदाहं सीमगू गइछाअं कमल गुच्छस्स मारुअधुअअर आत्ता पेक्खसि जंतं निआरेदि ॥३७॥

प्रिय सख्याः अस्थानानुरागः तत् किमत्र कर्त्तव्यं ॥ ३६ ॥

भोः किमेतया दुष्टगोपी पुत्रिकाया भणित्या वयस्य पश्य पश्य रवि कर चलिता हंसी मृगयति छायां कमल गुच्छस्य मारुत धुततरात्मा पश्यसि यत्तां निवारयति ॥ ३७ ॥

शशि । (मन ही मन में) अहो प्रिय सखि राधिका का इन्हीं से अनुराग है, अब में क्या करूं ॥ ३६ ॥

विदू । मित्र ? इस दुष्ट सखि की बातों का यहां क्या प्रयोजन है ।

देखो देखो ये हंसी रविकर में चलित होकर कमल गुच्छों की छाया को अन्वेषण कर रही है । किंतु ये कमल गुछ आपकी आत्मा को कंपित देख कर वायु वेग से कंपित होकर हंसी को निवारण कर रहे हैं ॥ ३७ ॥

कृष्णाः। (स्वगतं) अहो वचन भंगी धूर्त्तस्य (प्रकाशं) धिङ्मूर्ख किम प्रस्तुत मालपसि ॥३८॥

विदू । भोवअस्स मएज्जेव्व पथ्थुदं भणिदं॥३९॥

मद । (स्वगतं) सव्वथा कृतार्थासि अये राधिके ॥ ४० ॥

शशि । (प्रकाशं) महाभाअ असरिसं तुह्मारिसाणं अनुगदवंचणं ॥ ४१ ॥

भो वयस्य मयैव प्रस्तुतं भणितम ॥ ३९ ॥

महाभाग असदृशंत्वादृशानां अनुगत वचनं । ४१ ।

कृष्णा. (विदूषक के वाक्य को सुन कर मन ही मन में) अहो ? इस धूर्त का कैसा वाक् चापल्य है । [प्रकाश करके]

अरे मूर्ख ? क्या अप्रासंगिक आलाप करता है, धिक्कार है तोकूं ॥ ३८ ॥

विद. हे मित्र ; क्या मैं अप्रासंगिक कह रहा हूं ॥ ३९ ॥

मद. [ये सुन कर मन ही मन) अहे राधि के ? तुम सर्व प्रकार कृतार्थ हो गई ॥ ४० ॥

शशि. (प्रकट रूप से) अहे महा भागे ? तुमारे समान पुरुष के हम अनुगत होंय ये वंचना करती हैं ॥ ४१ ॥

कृष्णा: । भद्रेअन्यद्दृष्ट्या कलय । दयितो दयितस्तत्
स्या वालेयं कुलपालिका। अकांडे किमसौ मुग्ध
धत्तामाचार विप्लवं ॥ ४२ ॥

विदू । मोदिअह्माणां पिअवअस्सो धम्मसरणो
ता ओसरदु भोदी (कृष्णस्य हृदिहस्तं दत्वा)
भोदीमा उत्तम्म, साज्जेव्व । पिअवअस्सस्स
हिअए कुरुकुराअदि । ता मएज्जेव फुडं कादव्वं
सव्वं । (कर्णो भो वअस्स) तुह्मेहिं पि सासि-

भवति आस्माकं प्रिय वयस्यो धर्म शरण तद्प सरतु भवती। भवति
माउत्ताम्य सैव प्रियवयस्यस्य हृदये कुरकुरायते तस्मात् मयैव स्फुटं

कृष्ण । भद्रे ? और देखो ये कुल वंती वाला, जिनको पति ही अत्यन्त प्रिय है, इससे हे मुग्धे ? वे क्यों अनवसर में सदाचार को तिलांजली दे रही है ॥ ४२ ॥

विदू । अरे दुष्ट गोप वाल के ? हमारे प्रिय मित्र धार्मिक भए हैं, इस से यहां से तुम शीघ्र ही पलायन करो ॥

(श्री कृष्ण के हृदय पर हाथ रखकर बोलो,) अरे गोपिके फेर उत्तर मत देना, ये देख हमारे प्रिय मित्र श्री कृष्ण के हृदय में वो ही कुरंग नयना कटु कटु कर रही है । इसी से हमको ये सब

विणो वार सहस्सं दिठ्ठा। एन्हि कीस अत्थि ज्जन्तो

अप्पा अप्पा विज्जदि ॥ ४३ ॥

कृष्णः। धिङ् मूर्ख मम स्वप्न वृतान्तः कथं त्वया

ज्ञातः।

विदू। सिविणो त्रि किं परिहरसितहिं ज्जेव्व

अह्ने हिं पिदिठ्ठं ॥ ४४ ॥

कर्त्तव्यं सर्वयस्य युस्माभिरपि सास्वप्ने वार सहस्रं दृष्टा इदानीं कस्मा दृश्यमान आत्मा अथ्यापयसि। ४३।

स्वप्ने किं परिहरसि अपितु नतास्मिन्नेवास्माभिरपिदृ[illegible]॥४४॥

कार्य करना पड़ा। (श्री कृष्ण के कान में कहने लगा) मित्र[illegible]। तुम ने इसको स्वप्न में सहस्रों वार देखा होगा, इस समय वो ही [illegible] वरांगना को देख रहे हो ॥ ४३ ॥

कृष्ण—अरे मूर्ख तैने हमारे स्वप्न वृत्तान्त को कैसे जाना।

विदू— मित्र तुम क्या हमको स्वप्न में परित्याग कर देते हो ये बात मत कहो, इसी से स्वप्न में ही मैंने देखा है ॥ ४४ ॥

कृष्णः । (स्वगतं) यद्यप्यनेन वाचाट वटुना परिहास शील तया आलपितं तथापि सद्वादो वृत्तः भवतु तथापि जिज्ञासनीय स्वभावा हिवालारमण्यः । (प्रकाशं) भद्रे तन्निवर्त्यतां असदृशात् साहसादियं वाला (विदूषकं प्रति)। वयस्य तदेहि वयमपि वत्साहरणाययामः । भद्रेत्वमपिसानुनयमेनां निवर्तयेति ॥ ४५ ॥

मल्लार रागेण ।

शशिनि न रागं भजते नलिनी । रविमनुनैव वृषसयति रजनी ॥ कुलवनितानामिदमाचरितम् ।

कृष्ण—(मन में विचार किया) यदि ये वाचाल ब्राह्मण वालक परिहास रूप से आलाप करता है, तथापि यथार्थ वृतांत कह रहा है, कहने दो किंतु इस वाला रमणी का संपूर्ण भाव जानना ही उचित है।

(प्रकट रूप से शशि मुखी से कहा)

भद्रे उस वाला को असाधारण सहास से विवर्त करो (फिर विदूषक से वोले) मित्र आओ हम सब गोवत्स अन्वेशण करने चलें (शशिमुखी से कहा) भद्रे तुम भी उस वाला को समझा कर निवृत्त करो ॥ ४५ ॥

सखी मन में विचार करके देखो, जैसे शशधर को देख कर कमल प्रफुल्लित नहीं होता है।

परपुरुषाधिगमे गुरुदुरितम् ॥ शशिमुखि वारय वारिज वदनां। अनुचित विषय विंकस्वर मदनाम् ॥ ध्रु ॥ सायदि गणयतिनकुलचरित्रम् ॥ किमितिवयं कलयामन चित्रम् ॥ उदयतु रुद्र-गजाधिप हृदये। रामानंद भणित मति सदये॥४६॥

इति निष्क्रान्ताः सर्वे ॥ ४७ ॥

भावपरीक्षानाम द्वितीयोऽङ्कः ॥ २ ॥

जैसे रजनी दिवाकर को पति नहीं मानती है तैसे हा कुलवती स्त्रियों का भी स्वभाव है। वो क्यों अन्य पुरुष के साथ रति विधान करै। तिस से अत्यंत ही पाप होता है। इस से हे शशिमुखी वारिज मदन का शीघ्र ही निवारण करो। क्यों कि वे अनुचित विषय में उद्दाम मदन द्वारा व्याकुल हो रही है। यदि वो कुलाचार को गणना नहीं करती हैं। तो हम ही अपनी मर्यादा को क्यों छोडदें। जाओ अवश्य ही उस का निवारण करो। ये रामानन्द राय कवि विरचित संगीत राजा प्रतापरुद्र के हृदय में प्रकाश करै॥ ४६ ॥

(ये कह कर सबों का प्रस्थान) ॥ ४७ ॥

इति श्री माध्व गौडेश्वराचार्य श्री गोस्वामी बालकृष्णा-चार्यानुवादित श्री जगन्नाथ वल्लभ नाटके परीक्षिनम द्वितीयाङ्कः ॥ १ ॥

——):०:(——

तृतीयाङ्कः।

ततः प्रविशति अशोकमञ्जरी।

अशोक। अएसुदं मएमअणिआएवनदेअदाए ससि मुही ए सद्धं किम्पि रहसूसं कुणन्ती। माहवीलदामंडव सआसे पिअसही चिट्ठदितापेक्खिअ गमिस्सं। (अग्रतोवलोक्यसमुपसर्प्यच) अए एदाओलहु लहु किम्पिजंपन्ति ता ण जुज्जदि एत्थ परिसिदूं। इति निष्क्रान्ता॥ १॥

अये श्रुतम् मयामदनिकया वनदेवतया शशिमुख्याचसार्द्धं किंनमि रहस्यं कुर्वती माधवी लतामंडप सकाशे प्रियसखी तिष्ठति तत्प्रेक्ष्यगमिष्यामि। अये एताः लघुलघु किमपि जल्पन्ति तन्न युज्यतेऽत्रप्रवेष्टुं॥ १॥

(अशोक मंजरी का प्रवेश)

अशोक— अये? मैंने सुना है कि मदनिका वनदेवता और शशिमुखी के संग श्री राधिका कोई रहस्य करती करती माधवी निकुंज मे अवस्थान कर रही है, इससे मैं उनको देखकर ही जाउं (आगे को देखती देखती उनके समीप गई) अरे? ये धीरे धीरे क्या कह रही है। यहां जाना उचित नहीं है॥ १॥

(यह कहकर प्रस्थान)

(७)

ततः प्रविशति शशिमुखीमदनिकाभ्यांप्रबोध्य मानाराधा ।

राधा (दीर्घमुष्णांचनिश्वस्य) सत्यकंज्जेत्वपरिहिदह्मिमाहवेण ॥ २ ॥

सामगुज्जरीरागेण ।

कुलवनिताजनधृतमाचारम् ॥ तृणवदगणयंगलितविचारम् । शिवशिव किम्वाचरितमशस्तं । विधिरघुना वद वशयतुकस्तं ॥ ध्रु ॥ शिशुरपियुवतिरिवाह्लितभावा । विगलितलज्जितमहमिवकावा । गजपतिरुद्रमुदे समुदीतम् । रामानन्दरायकविगीतम् ॥ ३ ॥

सत्यकमेवरिह्यतास्मिमाधवेन ॥ २ ॥

(मदनिका और शशिमुखी की भेजी भई श्री राधिका का प्रवेश)

राधा— (दीर्घ निश्वास लेकर) सत्यही माधव ने हमको परित्याग करदिया ॥ २ ॥

हाय मैंने कुल वनिताओं का गृहीत भया, है जो आचार उसको अविचार पूर्वक तृण के समान माना, हरि हरि कैसा अयोग्य कार्य भया. मैं क्या करूं, वताओं कोन श्री कृष्ण को वश मे करेगा, शिव, शिव, मे शिशु होकर युवती का भाव लाभ कीया है. बडा कष्ट है. क्या मेरे समान और भी कोई निर्लज्ज है ।

रामानन्द राय वर्णित ये संगीत राजा प्रताप रुद्र का आनंद संपादन करै ॥ ३ ॥

शशि । विणिणादोज्जेव्वसव्वोवुत्तन्तोतासअं ज्जेवविआरीअदू । ४ ।

राधा (संस्कृत माश्रित्य) श्रावं श्रावं सुसाम श्रुति सामित परब्रह्म वंशी प्रसूतं दर्शं दर्शं त्रिलोकीवर तरुणा कलोकिलिलावण्य सारम् । ध्यायं ध्यायं समुद्यद्द्युमणि कुमुदिनी वन्धुरोचिः सरोचिश्चायंश्रीकान्त संगंदहति मम मनोमांकुकूलाग्नि दाहं । ५ ।

शशि। सहि मुञ्च अथ्थाणा गहं (संस्कृत माश्रित्य) ॥ ६ ॥

वर्णित एव सर्व वृत्तान्तः तत्स्वयमेव विचार्यतां ॥ ४ ॥
सखि मुञ्च अस्थानाग्रहं ॥ ५ ॥

शशि— मैंने तो संपूर्ण वृत्तांत कहा, अब जो बिचार कर्तव्य होय सो करो ॥ ४ ॥

राधा—(संस्कृत भाषामें) सखि? मनोहर सामवेद के समान बंशी प्रसूत नाद ब्रह्म को सुन सुन कर त्रैलोक्य मोहन नवीन तरुण श्याम सुन्दर जो कि साक्षात् कोलिकला (कंदर्प) के समान उनको देख देख कर एक सूर्य और चंद्रमा के समान शोभा शालि श्री कृष्ण का ध्यान करते करते मेरे मन तुसानल के समान मोकूं दग्ध कर रहा है ॥ ५ ॥

शशि— प्रिय सखि ? इस समय आग्रह परित्याग करो ॥६॥

यद्यद्व्यंजित मंजन प्रतिकृतौ कृष्णो त दर्थं मया तत्तत्तेन निवारितं शिशुदशाभाव प्रकाशैरलम् । आस्तामुत्कलिका प्रसून विगलन्माध्वी कनद्धंविषं कृष्णाध्यानमितोऽन्यतः सुवदने संकल्प माकल्पय । ७ ।

सुहयी रागेण ।

हीनं पतिमपि भजतेरमणी । केशरिणं किमुकलयति हरिणी। राधिके परिहर माधवरागमये ॥ध्रु॥ क्षणे शशिनिचकुमुदवनीयं।भजति न भावं किमुरमणीयम् । सुखयतु गजपति रुद्रनरेशं । रामानन्दरायगीतमनिशं ॥ ८ ॥

मैंने तुमारे लिये उन कृष्ण से जो जो वातें कहीं उन्होंने वोही वोही वातो का निवारण करके आपके शैशवभाव से उन सब वातों को व्यर्थ कर दिया। हे सुवदने? श्री कृष्ण का ध्यानछोड दोओ, ये चिता कुसुम गलित मधुमिश्रित विष हैं, इससे कृष्ण भिन्न अन्यत्र ही मन लगाओ ॥ ७ ॥

सखी ? पति यदि हीन भी होय तो रमणी उसी का ध्यान करती हैं, हिरणी क्या सिंह के शौर्य वीर्य को देख कर उसी से अनुरक्ता होती है। कदापि नहीं। हे राधिके ! माधव से अनुराग मत करो। शशि को क्षीण देख कर क्या कुमुदिनी रमणीय भाव प्रकाश नहीं करती । ये रामानन्द राय वर्णित नर नाथ प्रतापरुद्र के हृदय को सुखी करैं ॥ ८ ॥

राधा । (सास्रं) देवि मदनिके कः प्रकारः । प्रेम
च्छेदरुजोवगच्छति हरिर्नायं नच प्रेम वा स्थाना
स्थानमवैतिनापि मदनो जानाति नो दुर्वलाः । अ
न्योवेदनचान्यदुःख मखिलं नो जीवनंवाश्रवं
द्वित्राण्येव दिनानि यौवन मिदं हाहा विधेः काग
तिः । ९ ।

मद । कथमेवंउत्ताम्यासि यतः
समाकृष्टादूरात् किमपि यदिसाकेतकिवनप्रसूने
नोमीलत् सुरभिभरसारेणनियतम् । अथ भ्रामं
भ्रामं रजसि रस मालोक्य नमना गपि प्रांत प्राप्ता
परिहरति तंनोमधुकरी ॥ १० ॥

राधा— (शशिमुखी के वाक्य को सुन कर आखों में जल भर-कर बोलीं) देवी मदनिका ये क्या वात है । हरि भी तो प्रेम छेद वेदना से अवगत नहीं होते है, और प्रेम भी स्थाना स्थान का ज्ञात नहीं है और मदन भी हमको दुर्वल नही जानता । हा वडा कष्ट हैं दूसरा क्या कोई दूसरे के दुःख को जान सक्ता है, और जीवन भी हमारा हमारे वश में नहीं है.

योवन भी दो तीम ही दिन का है. हाय हाय ? विधाता की ये क्या गती है । ९ ।

मद—क्यों इस प्रकार उदास होती हो.

देखो नव विकसित केतकी कुसुम के मनोहर सौरभ द्वारा भ्रमर दूरही से आकृष्ट होता है, किंतु जबवो पुष्प के ऊपर घूमकर घूमता २ उसको पुष्प रज में रस नहिं देखता है तब यही भ्रमर पुष्पके निकट आकर क्या पुष्प को त्याग नहीं करता है । अवश्य ही त्याग करता है । १० ।

राधा । (धैर्यमवलम्ब्य) परित्यक्त एवेत्यर्धोक्तेन ससाध्वसोत् कंपं देवि नायं ममापराधः यतः । यदा यातो दैवान्नमधुरिपु रसौ लोचनपथं तदाऽस्माकं चेतो मदनहतकेना हृतमभूत् ।(क्षणं स्थित्वा दीर्घमुष्णाञ्च निःश्वस्य) पुनर्यस्मिन्ननेषक्षणामपिदृशोरेतिपदवीं विधास्या मस्तस्मिन्निखिलघटिका रत्न खचिता ॥ ११ ॥

मद । (स्वगतं) अति भूमिं गतोऽस्या अनुराग स्तदाति प्रिय कथनेनान्य मानसां रचयामि । (प्रकाशं) वत्सये पश्य पश्य ॥ १२ ॥

राधा (धैर्यावलंबन पूर्वक) अच्छा तो अब छोड दिया यह कह कर भीत चित्त से कंपित गद गद होकर बोली. देवि ? कोई अपराध नही है, क्योंकि अकस्मात् जब मधुरिपु श्री कृष्ण मेरे नयन गोचर भये, तब हीसे ये दुष्ट मदन ने मेरे चित्त को हरण कर लिया ।

(स्तब्ध होकर दीर्घ निश्वास होकर) देवि ? फेरभी ये जिस समय मे मेरे दृष्टि गोचर होंयगे उस समय को रत्नो से शुशोभित कर देऊंगी । ११ ।

मद. (मन ही मन में) अहो ? इस का क्या असीम अनुराग है, खैर, कोई अत्यन्त प्रिय बात के द्वारा इसको अन्य मनस्क करूं (प्रकाश रूप से बोली) वत्से ? देखो देखो ॥ १२ ॥

योऽयं त्वया स्वकर पुष्कर शिक्तमूलं सम्वर्द्धितः सुतनुवाल रसाल शाखी जातः सते मुकुल दंतुर मौलिरीषन्मन्ये तदेव मधुपाःप्रियमालपंति १३

राधा । (सत्रासोत्कम्पं) हलाशशिमुखि सम-र्त्तव्यास्मि ॥

मद । (स्वगतं) अहो केयमनर्थ परम्परास्वय मुपस्थिता ।

(प्रकाशं) वच्छे मातिविक्लवाभूः उपलक्षित मे वास्यसानुराग हृदयं ॥ १४ ॥

वत्से ॥ १४ ॥

तुम ने अपने कर कमल द्वारा जिसके मूल देश में जल सेचन करके वर्द्धित किया है, सो ये आम्र वृक्ष का अग्रभाग कुछ मुरझा गया है, हे सुतनु ! मैं जानू इसी से ये सब भ्रमर मधुर आलाप कर रहे हैं ॥ १३ ॥

राधा—(त्रास के सहित उत्कंपित होकर) अरे शशिमुखी हमको भी स्मरण रखना ।

शशि—(मन मन मे) आः ! क्या ये अनर्थ उपस्थित भया है (प्रकाश करके बोली) वत्से ! व्याकुल मत होना, तुमारे प्रति माधव के हृदय मे अनुराग मालूम पडता है ॥ १४ ॥

देशागरागेण ।

सरसकथासुकथं पुलकाचित मानन कमल मज सूम् । कलयत चारु हसित नववलितं परि हतके- लि सहस्रं ॥

मुग्धे परिहर शंकित मधिक मये ॥ ध्रु ॥ आदर मधुर मिमामनुवेलं कथमालपति ससारम्। सुमुखि सखीं तव तदपि मनांवत कलयति किमुनविचारम् गजपति रुद्र नराधिप हृदये वसतु चिरं रससारे। रामानंदराय कवि भणितंप रिचित केलि विचारे।१५॥

वत्से ? यदि तुमारे प्रति श्री कृष्ण का हृदय अनुरक्त नहीं है, तो क्यों तुम्हारी शशिमुखी सखी के सरस वाक्य तिसके बदन सरोज में पुलकित होंयगे, क्यों ही वे सहस्र सहस्र क्रीडाओं का परित्याग कर के मन्द मन्द हास्य करैं गे । इसी से हे मुग्धे ? अत्यन्त शंका को परित्याग करो, क्यों ये सब बातों की आलोचना करने से तुमारा मन विचार नहीं कर ता है । रामानन्द राय कवि विरचित ये संगीत रस केलि विचार चतुर गजपति प्रतापरू नरेन्द्र के हृदय में प्रकाश करें ॥ १५॥

राधा । देवि ! अनुमितमम्बुपयोदेतनुपरिकलिता दावानलज्वाला । वपुरतिललितं वालाशिवाशिवभ-वित्ता कथं हरिणी ॥ १६ ॥

मद । वत्से नियोजितापिमयामाधवी तत् परि ज्ञानाय त्वत् प्रति चुछन्दक सनाथ चित्रफलक हस्ता ॥ १७ ॥

ततः प्रविशति चित्रफलक हस्तामाधवी ।

माधवी । देवि वंदे ॥ १८ ॥

राधा— देवि ! मरीचि का से दह्यमान होकर सुकुमारी हि-रणी वाला किस प्रकारसे जीवन धारण करेगी । हाय ? घटाओं मेघ वर्षने का अनुमान कर के क्या जीवन रक्षाकर सकता है अर्थात् जीवन ही चला जायगा तो क्या करेगा ॥ १६ ॥

मद—वत्स ? स्थिर होउ, माधव का अभि प्राय जानने को मेने माधवी को नियुक्त किया है. तो तुमारे चित्रको लेकर श्री कृष्ण के समीप मंगई है । १७ ।

(चित्र पट हाथ में लेकर माधवी का प्रवेश)

माधवी—देवि ? प्रणाम करूं हूं । १८ ।

मद । वत्से स्वागतं तेऽपिविदितं रहस्यं ॥ १९ ॥

माधवी । अथ किं ॥ २० ॥

मद । तदा वेदय ॥ २१ ॥

माधवी । फलकमावेदयति ॥ २२ ॥

राधा । (सलज्जं) फलकं याचते ॥ २३ ॥

माधवी । देहिमे पारितोषिकम् ॥ २४ ॥

मद । (स्वगतं) ध्रुवं तदस्या हृदयं प्रतीत्यस्फुटं मुकुंदोपि चकारराग । भग्नःकदाचिद् यदयं प्रमादात् प्रेमांकुरोयोजयितुं न शक्यः ।
(प्रकाशं) वत्से उपनय फलकं ॥ २५ ॥

मद—वत्से ! तुमारी कुशल तो है क्या अभिप्राय जानलिया

माधवी—हां । २० ।

मद—वत्से ! अच्छा कहो तो सही । २१ ।

माधवी—इसी समय मे चित्र पट प्रकट करने को उद्यतभई

राधा—(लज्जा से) देखें देओ देओ लाओ एक वार तो देखें । २३ ।

माधवी—हम को पहले कुछ पारितोषिक देओ । १४ ।

मद—(मन मन मे) ठीक हीं श्रीराधा के हृदय मे स्पष्ट रूप से जाना जाता है कि श्रीकृष्ण भी अनुरागी भए हैं, क्यों नहिं प्रमाद वस प्रेमांकुर एक वार भी भग्न होने से फिर इनका संयोग होना दुःसाध्य है (प्रकाश करके) हे माधवी ? लाओ श्रीराधाका चित्र पट देओ । २५ ।

माधवी । मनागूदर्शयित्वांचलेनाच्छा दयति ॥२६॥

शशि । वलादूगृहीत्वाव लोकयति । अएकधं एदा इं अक्खएई इतिवाचयति । माशंकिष्ठाः सुमुखि विमुखी भावमेतस्यनस्याद्रानंदायप्रथम मुकुलाप ह्मिनीकस्य कामम् ॥

आघ्रायैवप्रशिथिलधृतिर्गं धमस्यास्तथापिनालं वेतक्षणामपि युवाकिन्नुमध्यस्थ भावम् ॥ २७॥

अये कथमेतानि अक्षराणि ॥ २७ ॥

माधवी—थोरासा दिखाकर वस्त्रांचल से ढक लिया । २६ ।

शशि—वर जोरी से छीन कर लेलिया अरे। इसमे तो कुछ अक्षर भी लिखे हैं. (ये कहकर पढ़ने लगी)

आयि सुमुखी ? हमारे विमुख मनको देखकर मन में कोई शंका मत करना, प्रथम विकशिता कुमोदनी देखकर किसको अच्छा नाहिं लगता है । यदि ये नव विकशित पद्मिनी का मनोहर सौरभ से तरुण व्यक्तिका धैर्य शिथिल होता है सो सत्य है, किन्तु उस क्षण के लिये तटस्थ भाव आश्रम नहीं करते हैं.

माधवी । सहिवड्ढसे पियाणुराएण ॥ २८ ॥

राधा । (दीर्घ मुष्णांच निश्वस्य) हलाकहिंदाणीं अह्माणं ईरिसंभा अधेअं मदनिकांप्रति एत्थको अत्थो ॥ २९ ॥

मद । तवैतदेव हृदयं प्रतीत्यस्फुटं मुकुंदोपि च-कारराग्मू । भग्नः कदाचित् यदयं प्रमादात् प्रेमां-कुरोयो जयितुं न शक्यः ॥

तद्वत्से माति विक्लवाभूः फलितोऽस्माकं मन-स्कामतरुः ॥ ३० ॥

सखि सुखं वर्धसे प्रियानुरागेण ॥ २८ ॥

माधवी—(प्रफुल्लित चित्तसे) सखि ! और क्या अब प्रिया नुराग सुख से वढे । २८ ।

राधा—(दीर्घ निश्वास लेकर) सखि ? अभी हमारा भाग्य कहां है (मदनिका के पति) देवि ? इन सब अक्षरों का क्या अर्थ है ॥ २९ ॥

मद. वत्से ? इनका अर्थ यह है कि तुमारा हृदय स्पष्ट जा-नले कि मुकुन्द का भी तुम से स्पष्ट अनुराग है, किन्तु प्रमाद वस से ये प्रेमांकुर भग्न हो जाय तो फेर मेरे दु:साध्य काम है इस का ये ही अर्थ है, इससे तुम अब अतिशय व्याकुल मत होना क्योंकि अब हमारा मनोरथ तरू पलित भया है ॥ ३० ॥

राधा । अज्जविणापच्छेमिता एत्थभोदीजेव्व स-
रणं ॥ ३१ ॥

मद । एषाहंचलितास्मि तदनुमन्यस्व ॥ ३२ ॥

राधा । सप्रणामं (संस्कृतमाश्रित्य) भगवति
निकुंजोयं गुंजन्मधुकर कदंबाकुलतरः प्रयातः प्रा-
योयं चरमगिरिशृं गंदिनमणिः ॥
मरुन्मंदंमंदंतरलयातिमल्लीमधुकरान्किमन्यद्वक्तव्यं
विधुरपिविधातासमुदयम् ॥ ३३ ॥

अद्यापिन प्रत्येमित दत्र भवत्येवशरणम् ॥ ३१ ॥

राधा—देवि ? हमको तो अभि विश्वास नहीं होता है किंतु इस विषय में तुम ही एक मात्र आश्रम हो ॥ ३१ ॥

मद—वत्से ? चिन्ता क्या है, अच्छा मैं जाती हूं अनुमति देओ ॥ ३२ ॥

राधा—(प्रणाम करके) भगवति? देखो, ये निकुंज, गृह गुंजित भ्रमरों से अतिशय आकुल हो रहा है, और सूर्य्य भी अस्तप्राय हो रहे हैं, और मंद मंद पवन के संचारण से मधुप (भ्रमर) वृन्द भी तरलित हो रहे हैं और अधिक क्या, चन्द्रमा उदित प्राय हो आये हैं, इस से जो उचित हो सो करो ॥ ३३ ॥

कर्णाट रागेण ।
मंजुतर गुंजदलि कुंजमति भीषणम् । मंदमरु दंतरग गंधकृत दूषणम् । सकलमेतदीरितं । किंच गुरु पंचशर चंचलं ममजीवितम् ॥ ध्रु ॥ मत्तपिक दत्तरुज मुत्तमाधिकरंवनं । संगसुख मंगमपि तुंगभयभाजनं । रुद्रनृपमाशुविदधातु सुखसंकुलं । रामपदधाम कविरायकृत मुज्वलम् ॥ ३४ ॥
मद । वत्से अस्मिन् वकुलपादपोपकंठेद्रष्टव्या समीतिनिष्क्रांता ॥ ३५ ॥
इतराअपिनिष्क्रांता ।
इतिश्री जगन्नाथ वल्लभ नाटके भावप्रकाशो । नामतृतीयोंकः ॥ ३ ॥

देवि ! देखो भमर की गुंजार से प्रति कुंज गृह निकुंज गृह अतिशय भीषण होरहा है मंद मंद मारुत (पवन) अब फेर इस नि कुंज को दूषित कर रहा है, अये ? मे क्या कहूं कंदर्प के शराघातो से मेरा ये चित्त वडाई व्याकुल होरहा है ये सब मत्त पिको (कोकिलो) के मधुर शब्द से हृदय को इस प्रकार से भी स्थिर नहीं होताहै हा: ? बडे कष्ट की वात है, अंग कर संग सुख के निमित्त तुंग भय का भाजन (पात्र) वन रहा है इससे हे देवि ? ये सब निवेदन किया जो उचित समझो सो करो । रामा नन्द राय रचित ये संगति नृपवर प्रताप रुद्र के हृदय मे सुख का विस्तार करै ॥ ३४ऽ
मद । वत्से मे इस वकुल वृक्ष के नीचे मिलूंगी ॥
(सव का प्रस्थान)
इति श्री रामानन्दराय विरचित श्रीजगन्नाथ वल्लभ नाटक के माद्ध भावप्रकाश नाम तृतीय अंक ॥३॥

चतुर्थाङ्कः ।

ततः प्रविशति मदनिका ।

मद । अये श्रुतं मदन मंजरी मुखात् यद्वकुलपादपो पकंठे वटुद्वितीयोनि वसति मुकुंदः तत्तत्रैवगच्छामीति पुरतोवलोक्य अये मुकुंदोऽयं वटुनासह किमपि मंत्रयन् सविषाद मास्ते तदध्रुवमेवाविलसित मत्रकुसुमशायनकेनतन्माधवीगुच्छांतरिताशृणोमीत्यात्मान मपवार्य स्थिता- ततः प्रविशति मदनावस्थां नाटयन् विदूषकेन सहालपन् कृष्णः ॥ १ ॥

(मदनिका का प्रवेश)

मद्— अये मैंने मदन मंजरी के मुख से सुना है कि मुकुंद मधु मंगल को संग लेकर वकुल वृक्ष के नीचे बैठे हैं, तब तो वहीं जाना पडेगा (आगे को देख कर) ये ही जो मुकुंद विषण्ण चित्त से स्वभाव मधु मंगल से कुछ सलाह कर रहे हैं, अब मैं निश्चय ही जान गई कि इस समय कुसुम शरासन विलास कर रहे हैं, अच्छा कछू हो, इस माधवी वृक्ष के ओट से इनके परामर्श सुनूं (ये कह कर छिप गई) अनंतर (मदन विकार आविष्कार पूर्वक) विदूषक से आलाप करते करते श्री कृष्ण का प्रवेश ॥ १ ॥

मद ।(स्वगतम्) मालव रागेण ।

मदनामिदंविधुमंडलमधुरंविधुरंवतसुचिरेण । कलय दनंगशराहत मनिशंमलिनमिवेंदुकरेण । माधवव पुरतिखेदं । जनयतिचेतासिशतधाभेदं ॥ ध्रु ॥ परिहृतहारं हृदय मुदारं धूषरितंविरहेण । मरकत शैलशिलातल माहतमहह किमिंदु करेण । गजप-तिरुद्रं सुकृतसमुद्रं शशिकिरणादपिशीतम् । रामानंद राय कविभणितं सुखयतु रुचिरं गीतम् ॥ २ ॥

मद— (स्वयं ही कहने लगी)

अहो माधव का ये मुख मंडल चंद्र मंडल से भी सुंदर है किन्तु इन्दु किरण से मलिन नलनी के समान निरन्तर मदन शराघात से चिर विधुर होकर बैठे है हा ? बड़े कष्ट की बात है की प्रिय सखि श्री राधिका के इस सरीर को देखकर मेरा चित्त शतशत प्रकार से विदीर्ण होरहा है, क्या दुःख है सखि के सरल हृदय मे हार भी नहि है, किन्तु चंद्र किरण हत मरकत शिलाके समान विरह मे धूषरित देखती हूं

रामा नन्द राय वर्णित ये संगीत गजपति पुण्य समुद्र प्रताव रुद्र के हृदय को चिर काल पर्यन्त सुखी करै ॥ २ ॥

कृष्णः। सा चेदुत्पलोचना सहचरी वक्रेण मेनिर्भरंप्रेमाणां प्रकटी चकारतदयं हासोमयाकल्पितः। हाहा शुक्ति धिया महामणिरभूत्त्यक्तोमया दैवतो यायां ल्लोचनगोचरंपुनरियं पुण्यैरगण्यैर्मम ॥ ३ ॥

विदू। भोवअस्स भणिदं ज्जेव्व मए मा एसा अणुराइणी परिहरिअदु त्ति एण्हि कीस उत्तम्मासि। भोअणच्छाए निउत्ताए लड्डुअमोदएहिं किं कादव्वं ताएत्थअहंज्जेव्व उवाओ ॥ ४ ॥

भोवयस्यभणितमेव मया एषा अनुरागिणी परिहियता मिति इदानीं कस्मादुत्ताम्यसि। भोजनेच्छायां निवृत्तायां लड्डुक मोदकैः किं कर्तव्यं तदत्राहमेवोपायः ॥ ४ ॥

कृष्ण—(दीर्घ निश्वास लेकर) सखे? यदि उस कमल नयना श्री राधिका नें अपनी सहचरी द्वारा हमसें निरतिशय प्रेम प्रकाश करा था, किन्तु उसको मैंने उपहास किया है. हाय? सीप समझ कर महामणिका परित्याग कर दिया है, यदि दैववश से मेरे नयन गोचर होय तो इससे वढकर हमारे भाग्य की सीमा क्या है ॥ ३ ॥

विदू— हे मित्र? तुम से तो पहलेही कहा था, कि इस अनुरागिणी को परित्याग मत करना, अव क्यों इतने व्यग्र हो रहे हो, भोजन की इच्छा न हो तो लड्डु का क्या करोगे, अव इस विषय कुछ उपाय करें ॥ ४ ॥

कृष्णः । कथमिव

विदू । अहं वह्मणो मंतं आवट्टिअ आवदिअ इमं आअड्ड इस्सम् ॥ ५ ॥

कृष्णः । ज्ञातं ते ब्राह्मण्यं तदाकलय मदनिकाम्॥६॥

प्रविश्यमदनिका । स्वस्तिवत्सा य ॥ ७ ॥

कृष्णः । पुरतोऽवलोक्य कथमियं मदनिका (सप्रश्रयं) देविस्वागतं ते ॥ ८ ॥

मद । महाभाग मुखचन्द्रदर्शनेन ॥ ९ ॥

अहं ब्राह्मणो मंत्र मावर्त्य आवर्त्य इमामाकर्षयिष्यामि । ५ ।

कृष्ण— क्या करोगे.

विदू— मे ब्राह्मण हूं मन्त्र पढकर उस मृगाक्षी राधिका को आकर्षण करूंगा ॥ ५ ॥

कृष्णः तुमारी ब्राह्मणता हम सब जानते हैं, अब गर्व मत करना, अच्छा देखो तो सही तुम मदनिका को ही आव्हान करो ॥ ६ ॥

कृष्ण (आगे को देखकर) यह ही है मदनिका ,(प्रणाय) से देवि ? आओ, आओ, आपका कुशल तो है ॥ ७ ॥

मद । (प्रवेश करके) वत्सक मंगल होय, यह कहकर आशीर्वाद किया ॥ ८ ॥

मद महाभाग । तुमारे मुख चन्द्र के दर्शन ही से समस्त कुशल हैं ॥ ९ ॥

विदू । कुसुमशरवेत्थिदो अम्हाणं पिअवअस्स ता आणी अदु साज्जेव गोवकुमरिया ॥ १० ॥

कृष्णः । (सलज्जं) धिङ्मूर्ख मैवंभण ॥११॥

विदू । अह्मे वह्मणा उज्जुआफुडं ज्जेव्व भणाम॥१२॥

मद । (सस्मितं) वत्स अपिनामआमिथ्या वचनोसि ॥ १३ ॥

विदू । अधइं पेक्खध पेक्खध एदाइं पउमपत्ताइं इतिमर्मर पत्राणि दर्शयति ।

कुसुम शर व्यथितोस्माकं प्रिय वयस्य तस्मादानीयतां साएव गोपकुमारिका । १० ।

वयं ब्राह्मणा ऋजवः स्फुट मेव भणामः । १२ ।

अथाकिं पश्यत पश्यत एतानि पद्म पत्राणि । १४ ।

विदू देवि मेरे प्रिय मित्र कुसुम शरासन (कंदर्प) केशरीर से व्याकुल होरहा है, इस से उन सब गोपकुमारियो को लेकर आना

कृष्ण. धिक् मूर्ख ? इनके आगे एसी बातें मत कहना ॥ ११॥

विदू. हम लोग ब्राह्मण हैं हमारा सरल स्वभाव है, हम स्पष्ट ही कहते हैं ॥ १२॥

मद. (हास्य से) वत्स ? मैं निश्चय जानती हूं तुम सत्यवादी हो ॥ १३ ॥

विदू. तब क्या, देवि ? देखो देखो ये संपूर्ण पद्मदलों को

(संस्कृतमाश्रित्य) ॥ १४ ॥

दुःखीवडारी रागेण ।

नलिनवनं मनवालिकृतेकृत मुज्झित कुसुम पला-

सम् । पल्लवमपि वृंदावनमनु कलयसि ललित

विकाशम् ।

सरले पश्यसि किमुनहि कृष्णं । त्वयिनिहिताशं

गलितविलासं चातकमिव घनतृष्णं ॥ ध्रु ॥

विधुमिववीक्ष्य विधुंतुदमानयचपल मिति प्रतिवे-

लम् । वदति कथं वद यदि मदनोहृदि

न वसति विरचित खेलम् ॥

गजपति रुद्रमुदं तनुतामिति रामानन्दराय सुगीतम् ।

ये कह कर सूखे पत्रों को दिखाने लगा ॥ १४ ॥
देखि ? वनमाली के निमित्त पद्म वन में एक भी कमलदल नहीं है, वृन्दावन में क्या नवविकशित पल्लव देखे हैं ।

हे सरले ? आप क्या मेरे मित्र को नहीं देखती हो इनने आप के प्रति आशा निर्भर करके विलास परित्याग पूर्वक जलद तृष्णा चातक के समान बैठे हैं, और तुम कहो तो सही, यदि मदन इनके हृदय में विविध क्रीडा अविष्कार करके निवास नहीं करता तो क्यों ये चंद्रको देखते ही, शीघ्र राहू लाओ, शीघ्र राहू लाओ, इस प्रकार बारंबार कहते, मदन शराघात से

निभृतमनोभवविशिख पराभवहरिविरहेण समेतम् ॥ १५ ॥

मद । किमेतावता ॥ १६ ॥

विदू । तुमं पिपिअवअस्सजादो जाणि दम्पिण आणासि ता सअं ज्जेव्व गदुअ मए अणिदव्वा अहम्पि णिसि ट्ठात्थो दूदो इति गंतुमिच्छति ॥ १७ ॥

कृष्णः । उत्तरीये गृण्हाति ॥ १८ ॥

मद । वत्स कृष्ण किमिति मय्येव गोपयसि ॥१९॥

त्वमपि प्रिय वयस्थो जातः ज्ञापितमपि न जानासि ततः स्वयमेवगत्वा मयाआनेतव्या अहमपि निसृष्टार्थो दूतः । १७ ।

अत्यन्त आहत हरि विरह युक्त रामानन्द राय का ये संगीत गजपति प्रताप रुद्र के आनन्द को विस्तार करें ॥ १५ ॥

मद—(अनभिज्ञ के समान) वत्स ? अवतक क्या हुआ । १६।

विदू—तुमसे मेरे प्रिय मित्र ने कहा तो भी नही जानी, तव तो मैंही जाकर लेआऊं, मैं भी निसृष्टार्थ दूत हूं अर्थात् अर्पितकार्य भार युक्ति द्वारा स्वयं साधन कर सक्ता हूं । ये कहकर चलने को उद्यत हुआ । १७ ।

कृष्ण—इसी समय मे दुपट्टा पकड लिया । १८ ।

मद—वत्स ? क्यों हमसे छिपाते हो । १९ ।

कृष्णा: । देवि किंचिद्द्रष्टव्यासि ॥ २० ॥

मद । विश्रब्धमभिधीयतां ॥ २१ ॥

कृष्णा: । त्वास्या देतस्या वदनरुच माकर्ण्यशशिनः कृतावज्ञा यस्मादय मपि रुजं तद्वितनुतां । तदंगे-नासंगं भजत इति यो मे वहुमतः कथं सोपि प्राणौ र्मम मलयवातो विहरति ॥ २२ ॥

मद । (स्वगतं) कृतार्थास्माकं मनोरथेन सार्द्धं राधिका तदस्या अपि विरहावस्थां प्रकाशयामि । (प्रकाशं) वत्स सापि लावण्य मात्र शेषा-कल्याणी ॥ २३ ॥ तथाहि ।

कृष्णा—देवि? कुछ तुम से पूछने की इच्छा होती है । २० ।

मद—निष्कपट होकर कहो । २१ ।

कृष्णा देवि ? आपके मुख से उस सुवदना श्रीराधिका के वदन सौन्दर्य को सुनकर चंद्रमा का भी तिरस्कार कर दिया, इस से वे हृदय मे निर्दय रूप से पीडा कर रहीहैं अधिक क्या जिसको (विधू वदना का अंग स्पर्श कियाहै) ऐसेकहकर वहुत सन्मान कियाथा, वोही दाक्षिण समीरण मेरे प्राणोंका हरण कर रहा है । २२।

मद (मनही मन मे) मेरी तो मनोवांछा पूर्ण भई, और राधा भी कृतार्थ भई, इससे उसकी भी विरहा वस्था वर्णन करूं (प्रकाश करके) वत्स ? उस सुंदरीका लावयरय मात्र शेषहै ।२३।

शिलापट्टे हैमे तुहिन किरण चन्दन रसैरियं तन्वीपिष्टा तनुमनु विलेपं मृगयते । क्षणं स्थित्वा हाहा सरस विसिनी पत्र शयने समुत्तस्थौ यावज्ज्वलति न चिरान्मर्म्मर मिदम् ॥ २४ ॥

सामतोडी रागेण ।

निरवधि नयन सलिल भवसादे । पतति कृशा परिचलति च पादे। माधव गुरुतर मनसिज वाधा। हरिहरि कथमपि जीवति राधा ॥ ध्रु ॥

निवससि चेतसि कथमिव वामम् । शिवाशिव समयसि तदपि न कामम्। गजपति रुद्र नृपति मविगीतम् । सुखयतु रामानन्द सुगीतम् ॥ २५ ॥

वत्स। वह अत्यंत क्षीण हो रही हैं हिम शिला में चंदन घिस कर शरीर में लेपन करने से चेष्टा करती हैं सखी जन सब कुमुदिनी दल की शय्या करके उस पर उनको शयन कराके रखते हैं जब तक शरीर के ताप से कमल दल सब शुष्क नहीं होते हैं तब शयन कराते हैं क्षण भर रह कर फिर हाहाकार करके उठ कर चली जाती हैं ॥ २४ ॥

हे माधव कंदर्प का बाधा बडा भारी है हरे हरे राधाजी अतिकष्टसे जीवन धारण कररहीं हैं उनके नेत्र जल से सब भूमि गीली होकर कर्दम होजाती है यदि वह किसी स्थान को पादचारसे जानेकी इच्छा करती हैं तव शरीर क्षीण होनेसे उसी कर्दममे गिर पडतीहैं हाय तुम उस सरल चित्तमे वक्र होकर किस प्रकार वास करते हो शिव शिव तथापि उनका काम शांति नहिं करते हो रामानंदरायका वर्णित यह संगीत शुद्ध हृदय गजपति रुद्र राजाके सुखको वर्धनकरें ॥ २५ ॥

विदू । भोदी साहसि आओ गोविआओ होन्तित्ति तक्केमि । जं चन्द चन्दणेहिं अणुलेवणं मगूगेन्ति अह्माणं पिअवयस्सो उणचन्दं पेक्खिअ दिणअ-रं विअउलुअ कहिं विउवारिद सरीरो णअण जुअलं मुद्दिअ चिट्ठदि चन्दणाणं वाअं पिलम्भि अ सिद्ध तणूणं विअभूयंग इदोऊदोओसरेदि।२७।

कृष्णः । (स्वगतं) साधु भणितं (प्रकाशं) धिङ् मूर्खमाति वाचालो भव ॥ २७ ॥

भवति साहसिका गोपिका भवन्ति इति तर्कयामि यच्चन्द्र चंद नैरनुलेपनं मृगयन्ति अस्माकं प्रियवयस्य पुनः चन्द्रं प्रेक्ष्य दिनकर मिवउलूकः कुत्रापि अपवारित शरीरो नयन युगलं मुद्रयित्वा तिष्ठति। चन्दनानां वातमपि लब्ध्वासिद्धतंत्र मिवभुजंग इतस्ततोऽपसरति । २६ ।

विदू जो कुछ होय. किन्तु मैंने ये अनुमान कियाहै कि गोपिका सब सहास कर लेंगि । क्योंकि इस समय भी चन्द्र चन्दन के द्वारा शरीर मे अनुलेपन करने को इच्छा करतीहै. क्या आश्चर्य्य है ? कि मेरे प्रिय मित्र चन्द्रमा को देखते ही सूर्य किरणोंके समान तपित होकर संपूर्ण अंग को संगोपन (छिपा) कर और दोनों नेत्रों को बंद करके अवस्थित करते हैं अकस्मात् यदि चंदन वायु शरीर मे लगने से सिद्ध मंत्र के जपसे भुजंग के समान दौड कर पलायन करते हैं । २६ ।

कृष्ण (मन ही मन मे) ये कहता तो सत्य है (प्रकट कर के) अरे मूर्ख ? अधिक वाचालता मत करै । २७ ।

मद । एतस्या हृदय परीक्षणाय कतिकति प्रकाशिता न धर्माः ॥ २८ ॥

कृष्णः । (स्वगतं सातंकं) अपिनामनिवृत्तेयं मदभिलाषतः ॥ २९ ॥

मद । तदस्तु ।

यदानासौ दोषं गणयति गुरूणां कुवचने न वा तोषं धत्तेसरस वचने नर्म सुहृदां । विषाभं श्रीखण्डं कलयतिविधुं पावक समं तदास्यास्तद्वृत्तंत्वयिगादितुमत्राहमगमम् ॥ ३० ॥

मद—तुमने राधिका की परीक्षा करने को कितने कितने हि धर्म प्रकाश कीये हैं । २८ ।

कृष्ण—(संकित मन से) देवि ! क्यों उनने हमारी अभिलाषा क्या छोडदिया है ? । २९ ।

मद—वत्स ! वही बात है । मैं ने जब उसको देखा तो गुरु जनो, के कुवाक्य में दोष नहीं मानती हैं और सखि गणों के परिहास वाक्यों को सुनकर सुख नहीं मानती हैं चंदन को भी विष के समान मानती हैं चन्द्रमा को देखकर अग्नि के समान बोध करती हैं इस समय में तुमसे उनकी ये सब अवस्था कहने को आई हूं । ३० ।

कृष्णः । (सोच्छ्वासं) त्वञ्चे दवञ्चन परेस्मर-
वारिराशे रुद्धर्तुमेषि तदकारण वत्सलासि। तत्के-
शरद्रुम निकुंज गृहे प्रसाद्य तामानयस्व नयको
विदतां तनुष्व ॥ ३१ ॥

मद । वत्स सत्यमेवेदं ॥ ३२ ॥

विदू । भोदिउज्जुएसञ्चकं ज्ञेव एदं एत्थ अहंज्ञेव
पडिभू वह्मणो ॥ ३३ ॥

कृष्ण—(उत्साह पूर्वक) देवि ! आपके मनमें कोईवंचना जो नहीं है, आप इस समय हमको कंदर्प समुद्र से उद्धार करने को आई हो आप का ये निर्हेतुक् वात्सल्या है, इससे उनकोप्रसन्न करके इस केशर कुंज में लेकर आओ, इसी से आपकी निर्लज्जता विस्तार होयगी ॥ ३१ ॥

मद—अच्छा मैं निश्चय ही लेकर आती हूं ॥ ३२ ॥

विदू—देवि ! तुमारा सरल स्वभावहै, इसको मिथ्या मत समझना, जाओ उनको शीघ्र ही लेकर आजाना, मैं ब्राह्मण हूं इस-विषय में साक्षी रहा ॥ ३३ ॥

कृष्णः । अलमन्यथा सम्भावनया कुरुमत् प्रतीकारं ॥ ३४ ॥

मद । इयं प्रस्थितास्मि स्वस्ति वतूसाय । इति निष्क्रांता ॥ ३५ ॥

ततः प्रविशति संकेतो चित वेशा राधिका ।

राधा । सहि माहवि विप्रलम्भीद ह्मिभवदीहिं॥३६॥

रामकेलि रागेण ।

तिमिरतिरोहित सरणी । गिरिषु दरीषु समेवहि

सखि माधवि विप्रलम्भितास्मिभवतीभिः ॥ ३६ ॥

कृष्ण. देवि ! अब अन्य सम्भावना का प्रयोजन नहिं है जाओ सीघ्र ही हमारा कार्य्य सिद्ध करो ॥ ३४ ॥

मद—अच्छा मैं जाती हूं आपका मंगल होय

(ये कहकर प्रस्थान) ॥ ३५ ॥

(संकेत योग्यवेश से श्री राधिका का प्रवेश)

राधा—सखि माधवि ! तुम क्या हम से बंचना करती हो ॥ ३६ ॥

सखि—येही रास्ता है जिसमे अंधकार है, गिरि गुहा कुछ भे नहीं दीखता है अभितक देविमदलिका लौटकर नहीं आई, वे

धरणी ॥ चिरयति किं सखि देवि। विधिरपि मयि किमु नहि हित सेवी ॥ ध्रु ॥ अतिवाहित मति भीमं । विफल मिदं किमु गहन मसीमम् ॥ सुखयतु रुद्रगजेशं। रामानन्दराय कृतमनिशं॥३७॥

माधवी । सखि अलमन्यथा संभावनया आगता मिव देवी मवधारय ॥ ३८ ॥

ततः प्रविशति मदनिका

मद । वत्से दिष्ट्या वर्द्धसे ॥ ३९ ॥

राधा। (सहर्षोच्छ्वासं) देवि अधको तत्थ वुत्तन्तो॥४०

अथ कस्तत्र वृत्तान्तः ॥ ४० ॥

वहां क्या कररहीं हैं, हाय ? विधाता क्या हमाराहीं अहितकारी भया है, हाय क्या कष्ट है ? हमारा ये असीम दुर्गम कानन (वन) लंघन करना निष्फल भया रामानंदराय वर्णित ये संगीत नरपति प्रतापरुद्र के निरतिशय आनन्द को वर्द्धन करें ॥ ३७ ॥

माधवी. प्रियसखि ! अब और अन्यथा सम्भावना मत करो, देविमदनिका भी आगत प्राय है ॥ ३८ ॥

(मदनिका का प्रवेश)

मद—वत्से ! तुमारा भाग्य अच्छा है ॥ ३९ ॥

राधा—(हर्ष एवंउल्लासपूर्वक) देवि ! आओ, वहां का क्या वृत्तान्त है ॥ ४० ॥

मद । वलवति मदनज्वरे यः स्यात् ॥ ४१ ॥

राधा । कथन्विअ ॥ ४२ ॥

मद । इन्दुं निंदति चंदनं विकिरति प्रालम्बकं मुञ्चति प्रालेयांत्र सति प्रियं परिजनं नाभाषते संप्रति । गोविंद स्तत्रविप्रयोग विधुरः किं किं नवा चेष्टते तत्कुंजोदर तल्पकल्पनपरं राधे तमाधारय। ४३

कथमिव ॥ ४२ ॥

मद—और क्या वृत्तान्त हो प्रबलमदन के द्वारा ज्वाराक्रान्त भया है सो ही वृत्तान्त है ॥ ४१ ॥

राधा—कहो तो सही वो किस प्रकार है ॥ ४२ ॥

मद—वत्से ! गोविंद तुम्हारे विरह में व्याकुल होकर क्या क्या चेष्टा नहीं करते हैं ? वह चंद्रमा को देखकर इससमय उस की निंदा करते हैं चंदन को देखतेही फेंक देते हैं गले में पडे हुए सरल हार को दूर पटक देते हैं ओस को देखकर त्रासित होते हैं इस समय किसी प्यारे वन्धु से वार्ता भी नहीं करते निरन्तर कुंज गृह में शय्यारचना करते हैं इस्से हे राधे ! शीघ्र ही जाकर कुंज में उस माधवकी आराधना करो ।

अथ निकुंजे कृष्णः ।
सखे कथंचिरयति मदनिका (सातंकं) इयं तन्वी पीन स्तन जघन भारालसगति विदूरे कुंजोऽयं मम रचित संकेत वसतिः । स्वतो भीरु र्वाला ग-हन मपि घोरान्ध तमसं कथंकारं सा मामभिसर तु कामेऽत्र शरणं ॥ ४४ ॥
(त्तणांचिंतांनाटयित्वा दीर्घमुष्णांच निःश्वस्य) किमेषा मत्वामाम परिचित भावं विमुखतां प्रयात। विश्वासं किमु सहचरी वाचि नगता । अथ भ्रांतावर्त्म्यति तिमिर भाजीहविपिनेनशक्ता तन्वंगी स्मरशरहता वा प्रचलितुं ॥ ४५ ॥

कृष्ण—सखे ! मदनिकाने क्यों इतनी देरकी ? (सातङ्क) एक तो वह कृशांगी उस पीन स्तन और गुरुजघन के भार से गमन और भी मन्द है । और मेरी संकेत की हुई कुंज अति दूर है और विशेषतः बाला रमणी सब स्वभावतः भीरु हुआ करती हैं हा कष्ट ; वन भी घोर अन्धकार मय है किस तरह से वो वाला हमारे निकट आवेगी । हरि हरि इस विषय में कौ हमारा आश्रय होगा ॥ ४४
(अनन्तर क्षण काल चिन्ताके बाद दीर्घ उष्ण निश्वास लेकर)
वे क्या हमको अपर चित्त समझ कर हम से विमुखी होगई, सहचरीयों के वाक्यों से क्या उनको विश्वास नहीं भया अथवा ये वन घोर अंधकार मय है, इससे रस्ता भूलकर अन्य किसी स्थान को तो नहीं चलीं गईं किम्वा वे अत्यंतही निर्वल हैं इसी से कहीं कंदर्प वाणोंसे आहत होकर यहां तक नहीं आसकीं । ४५ ।

पुरतोऽवलोक्य

अये कथ मुदित प्रायोऽयं चन्द्रः ।

तथाहि ।

यदेदं कोकानां प्रसरति तरां काकुविरुतं तथा स्फीतं सूफीतं भवति परितः कैरव कुलं। यथामृर्च्छन्मूर्च्छत् प्रतिपदमिदं वारिजवनं तथा शंके चन्द्रः प्रथमागिरिवीथ्यां विहरति ॥ ४६ ॥

सखेदं ।

सख्यावाचिकथंचन प्रतियती वालांधकारोचिते

(आगे की ओर देखकर)

अरे ! ये क्या चन्द्रमा का उदय भया है इस समय संपूर्ण [को]कवाक् (चकवा) आर्त नाद कररहे हैं ये कुमोदिनी भी बिक[सि]त हो रहीं हैं, और ये पद्म वन में भी पद्म मूर्छित होरहे हैं तब तो निश्चय ही बोध होता है कि शशधर उदयाचल में क्रीडाक[र] रहे हैं ॥ ४६ ॥

हा ? वो बाला, सखी जनों के वाक्य का विश्वास करले अंधकारोचित वेष धारण कर के हमारे संकेतकुंज के निकट ही आगई है, इसी समय ये दुष्ट चंद्रमा अपनी चंद्रि

नैषावेश भरेण वागतवती वर्त्तन्यथाधेमम ।
अस्मिन् शक्रादिशं शशांकहतके संदूषयत्युन्मना
नागंतुं न च गंतु मद्य चतुरा किम्वा कारिष्य
त्यसौ ॥ ४७ ॥

साविनयांजलिंबद्ध्वा ।

रेपूर्व पर्वत सखे कृपया ममत्वं तुंगान्यमूनि
तनु शृंग शातनि कामं । याते विलोचन पथं
शशिनिप्रयाणे विघ्नो भवेन्मृग दृशो मम जीवि-
तेच ॥ ४८ ॥

का (चांदनी) द्वारा पूर्व दिशा को दूषित कररहा है हाय ! इस
से वे स्वतंत्र होकर नहि आसक्ती हैं न लौटकर ही जासकती हैं
अर्थात् जब वे घर से चलने का विचार कीया था, तब मालूम प
ता है कि अंधकार मय रात्रि थीं, जब आधी रस्ता में आई तबअ
कस्मात् ही चद्रमा का उदय हो गया, प्रकाश होते ही मन से
शंका भई, अहो ! मैं तो अंधकारोचित वेष धारण करके आई
इस चांदनी में किस प्रकार इस वेष से जाऊंगी, और कोई न
खनले, इससे मालूम पडता है कि इसी चिन्ता में तो नहीं पडी
हैं ॥ ४७ ॥

(विनयपूर्वककृताञ्जली होकर) अहे पूर्वशैल ! तुम हमारे परम मित्र हो, हमारे ऊपर कृपाकरके ये अपने शतशत शृंग यथा पूर्वक ऊंचे करो, यदि यह चंद्र दृष्टि गोचर हो जायगा तो मृग नयनी श्रीराधिका का आगमन एवं हमारा जीवन इन दोनोहीका विघ्न होयगा ॥ ४८ ॥

विदू । (कर्णं दत्वा) भो सुणी अदृ किं रुणु रु-
णु सद्दं कुणई ॥ ४९ ॥

कृष्णः । (श्रुतिमभिनीय नेपथ्ये)तन्मञ्जीर रवः किमेष किमु वा भृंगावली निस्वन स्ततूकाञ्ची रणितं नु मन्मथवतां किं सारसानां रुतं । एवं कल्पयतो विकल्पमचिरादालम्ब्य सख्याः करं गोविन्दस्य निकुंजकेलिसदने भूषाभवद्राधिका ॥५०॥

भोश्रूयतां कि रुणु रुणु शब्दं करोति ॥ ४९ ॥

विदू—(कान लगाकर) मित्र ! सुनो सुनो ये क्या रुणु रुणु शब्द हो रहा है ॥ ४९ ॥

कृष्ण—(नेपथ्य की ओर कान लगाकर) भाई ? ये क्या उसी खंजनाक्षी के नूपुरों का कब्द है, कै ये भूषणों का शब्द है, अथवा कांची का शब्द है, ।

अथवा स्मरातुरसंपूर्ण सारसों का कंठ रव (शब्द) है क्या हैं ये सो नहीं मालूम पडता है ।

(दमोदर इस प्रकार तर्क वितर्क करते थे इसी समय में श्री राधिका सखियों के कर में कर प्रदान पूर्वक आकर गोविंद के निकुंज केली गृह को शुशोभित किया ॥ ५० ॥

मालवश्री ।

चिकुर तरंगक फेन पटल मिव कुसुमं दधती कामं
नटदपसव्य दृशा दिशतीवच नर्त्तितुमतनुमत्रामं ।
राधा माधव विहारा । हरि मुपगच्छति मन्थर प-
द गति लघुलघु तरलित हारा ॥ ध्रु ॥ शं
ज्जित रसभर चंचल मधुरदृगन्त लन्यमूनि
मथनं प्रति समुपहरन्ती कुवलय दाम न पथं
गजपति रुद्र नराधिप मधुनातन मदनं मधुरेण
रामानंद राय कवि भणितं सुखयतु रस विस
रेण ॥ ५१ ॥

अहो ! श्री राधा आप का कुंचित केशों में यमुना तरंगों से
रंगायमाण फेनसमूह के समान संपूर्ण पुष्पों को धारण करके न-
र्त्तन शील दक्षिण नयन द्वारा कंदर्प को नृत्य करने का आदेश कर-
तीं करती मधुर वेश से श्री कृष्ण के समीप गमन कर रहीं हैं ।
क्या आश्चर्य है ?

जिनके पद संचारण से हृदय के ऊपर हार मंद मंद आन्दो
लित हो रहा है । शंका और लज्जा से रस भरे सुमधुर चञ्चल नय
नांचल द्वारा ही मानों सकौतुक से मधु मथन (कंदर्प) को कुवल
य दान (हाथी) उपहार दे रहीं हैं । रामानन्दराय रचित ये संगी
त मदन रूप नरपति प्रताप रुद्र का रस विस्तार द्वारा आनादित क
रै ॥ ५१ ॥

विदू ।(पुरतोऽवलोक्य) भो वअस्स आह्महिं जिदं एषा तत्थ भोद्गा आअच्छदि त्ति लच्छी आदि ॥ ५२॥

ततः प्रविशति मदनिका ।

मद । वत्सौ सम्पन्नश्चिरेण सुहृदां मनोरथः तन्मामनु मन्यस्व स्थानान्तर वासगमनाय ॥ ५३ ॥

विदू । मम्पि निउञ्जान्तर गमनायेति । इति निष्कान्ताः सर्वे ॥ ५४ ॥

इति राधाभिसारश्चतुर्थोंकः ॥ ४ ॥

भो ।यस्य जितमस्माभिः एषा तत्र भवती आगच्छतीति लक्ष्यते ॥ ५२ ॥

ममापि निकुञ्जान्तर गमनाय ॥ ५३ ॥

विदू—(आगे की तरफ देखकर) अरे भाई ! देखो हमारी ही जयभई । ये उज्ज्वलांगी श्री राधिका इस के शरकानन (वन) ही में आरहीं हैं, ये दीखरहीं हैं ॥ ५२ ॥

[मदनिका का प्रवेश]

मदं—अहे वत्सयुगल ! बहुत विलम्ब में सुहृद्गों का मनोरथ सिद्ध भया है, अब आज्ञा देओ तो दूसरे स्थान को जाऊं । ५३

विदू—सखे ! हमको भी अन्य किसी निकुंज में जाने की आज्ञा देओ [ये कहकर सबका प्रस्थान] ॥ ५४ ॥

इति श्री जगन्नाथ वल्लभ नाटके राधाभिसार नाम चतुर्थोऽङ्कः

पंचमाङ्कः ।

ततः प्रविशति शशिमुखी ।

शशि । अये णिउञ्जे कल्लाणाहि णिवेसाणं को वुत्तन्तो त्ति ण जाणीआदि । ता देईं अणु सरिअ जाणिस्सं (पुरतोऽवलोक्य) अए कधं ए षा णिद्दा मुउलिद लोअणा लहु लहु इध ज्जेव्व आअच्छदि ॥ १

अयेऽद्य निकुञ्जे कल्याणाभिनिवेशयोः कोवृत्तान्त इति न ज्ञायते तत् देवीमनुसृत्य ज्ञास्यामि अये कथमेषा निद्रा मकुलित लोचना लघु लघु इहैवागच्छति ॥ १ ॥

(शशिमुखी का प्रवेश)

शशि—(उत्कंठित मन से) आः ! आज निकुंज से कैसा मंगल कार्य हो रहा है, राधा माधव का क्या वृत्तांत भया सो कुछ भी नहीं मालूम पडा. तव तो देवी के पास जाकर ही पूंछूं,

(आगे की तरफ देखकर)

अहो ! यह वन देवी निद्रा युक्त नेत्रों वाली धीरे धीरे यहां आरही है ॥ १ ॥

संस्कृतमाश्रित्य ।

स्वैरं स्वैरं कथमपि दृशौमन्द निष्पन्दतारे
विन्यस्यंतो शिथिलत भुजद्वंद्व सन्नामितासा।
मंद यास् स्खलित चरणा व्यस्त मञ्जीर घोषा
देवीनिद्रा कुलतर तनुर्मोदमाविस्करोति ॥ २ ॥

सुखसिंधुडा रागेण ।

दरमुकुलारुणा लोचन मानन इहगत कांति वि-
काशे ॥ कमल मिवारुणामुषसि विधावनु विम्वित
मम्वु सकाशे ॥ किमिदमियं प्रविशंती । भजाति

(स्पष्ट भाषा में) अये ! इसके नेत्र कैसे डगमग डगमग कररहे
आलस्य युक्त नेत्रों के दोनों तारे निश्चल दिखाई दे रहे हैं,
[illegible]र दोनों भुजा शिथिल होकर स्कंधदेश (कंधा) से मानों गिर
[illegible]डते हैं, क्या आश्चर्य है ? मंद मंद गमन से चरण स्खलित होने
नूपुर विपरीत शब्द कररहे हैं, आहा ! देवी अपने निद्रा युक्त
शरीर द्वारा हमार आनन्द को विस्तार करती हैं ॥ २ ॥

क्या आश्चर्य ! रति के अंत जैसे रात्री को बिताकर कामि-
नी चली जाती हैं तैसेही ये मदनिका आरही हैं, इसको देखने ही
से मेरा मन आनान्दित हो गया,

प्रातःकाल में जैसे सलिल (जल) के समीपवर्ति चंद्रमंडल
में अरुण कमल का प्रतिबिंब दीखता है तद्रूप तैसे ही इसके नेत्र
ईषत् मूकुलित और मलिन वदन दीखरहा है।

मनोममरति विरता विव वनिता कापि चलंती ॥ ध्रु ॥ शिथिलभुजा मुदु रणित कनक मणि कंकण मिदमनुवारं। विसकल पाद निवेश निवारित नूपुर ललित विहारम्। गजपति रुद्र नराधिप हृदये मुदमिदमातनुतेति । रामानंदराय कवि भणितं विलसति रसिक जनेति ॥ ३ ॥

ततः प्रविशति यथोक्त वेशा मदनिका ।

(चक्षुषी विमृज्य पुरतोऽवलोक्य)

अहो रमणीयता वसंत यामिनी परिणामस्य ॥४॥ तथाहि ।

आहा ! दोनों भुजा शिथिल होकर पडी हैं भुजाओं के क[illegible] क मणि मय कंकण झुन झुन शब्द कररहे है. चरणों का विष[illegible] रूप से पात होने से नूपुरों का मनोहर शब्द निवारण हो रहा [illegible] इससे इसको निद्रा युक्त देखरही हूं, रामानन्दराय रचित ये संगीत गजपति प्रताप रुद्र के हृदय में आनन्द विस्तार पूर्वक संपुर्ण रसिक जनों को विलासित करैं ॥ ३ ॥

(उपरोक्त वेशधारण करके मदनिका का प्रवेश)

मद—(दोनों नेत्रों को मीडती मीडती आगे की तरफ देखकर) अहो ? वसंत ऋतु की रात्रि का अवसान कैसा सुन्दर है ॥ ४ ॥

कोई स्थान में दक्षिण समीरण से आलिंगित होकर कमल

इतोमंदं मंदं सरसिजवनीवात लहरी ततश्चूता-
स्वाद प्रमुदित पिंकानां कलकलः। क्वचित्फुल्लां
वल्लीमनुमधुकराणांस्वरकथा कुतश्चित् कोकानां
मृदुमधुर मानंद लपितम् ॥ ५ ॥

(द्वित्राणिपदानि परिक्रम्यआनंद मभिनीय)

उद्दाम स्मर चातुरी परिचयादन्योन्य रागादिमां
रात्रिं जागरितानि सद्मनि युवद्वंद्वानि यच्छेरते।
तत्तेषां श्वसितानिलेन तुलना मासादयिष्यन्निव
प्रोन्मीलत् कमलावलीषु वलते श्रीखण्ड वीथी
मरुत् ॥ ६ ॥

कानन (वन) मंद मंद संचरण कररहा है, कोई स्थान में आम्र पुष्प को आस्वादन करके आनन्द से कोकिल कुल कुहू कुहू शब्द कररहे हैं, और कोई स्थान में प्रफुल्लित पुष्पों की लताओं को देखकर अलिपुञ्ज (भ्रमर) गुञ्जन कररहे हैं और किसी स्थान में प्रफुल्लित चित्त से चकवा चकवि दोनों सुकोमल मधुर अलाप क ररहे हैं ॥ ५ ॥

(आनन्द प्रकाश करके)

अये ! उद्दीप्त हुए कंदर्प के चातुर्य के परिचय से आपस में अनुरक्त युवा युवती गण रात्रि में जागरण करके जिस गृह में निद्रा को प्राप्त होते हैं उन दंपतियों के निश्वास के साथ समता लाभ करने के लिये यह मलयपवन ईषत् विकाषित कमल वनके आश्रय लेने को जाता है ॥ ६ ॥

(पुरतो वलोक्य साविस्मयं)

चकित चकितं क्कापि क्कापि प्रमोद निरंतरं क्कचन वनिता कुंठोत् कुंठं निधाय विलोचने । कलयति तथावस्थामेषा रथांग कुटुम्बिनी भवति न यथा चांतेवासी विदग्ध वंधुजनं ॥ ७ ॥

(च्चणमन्यतोगत्वा साश्चर्यं)

अये अति रमणीयमिदं वर्तते ।

तथाहिं ।

उन्मीलत् कमलोदरे मधुभरे दृष्टानु विम्वं

(आगे की तरफ देखकर विस्मय पूर्वक)

अहो ! ये चकवी प्रातःकाल के समय में चकित होकर चारो ओर देख रही है, कभी गाढ प्रमाद से पूर्ण होकर कांत (पति) को आलिङ्गन कर रही है कभी कभी अत्यन्त उत्कंठा से कान्त के प्रति कटाक्ष पात करती है, अहो ! चकवी की ये अवस्था देखकर कौन रसज्ञा स्त्रीजन इसके आचरण को नहीं करती होंगी मालूम पडता है कि प्रातःकाल में संपूर्ण वधुजन इसी प्रकार व्यवहार करती है ॥ ७ ॥

(थोडी देर दूसरे स्थान में जाकर आश्चर्य युक्त होकर)

अये ! ये भ्रमरी ईषत् विकशित शतदल कमल मे मधुराशि (पराग) को देखकर उसको पान करने की इच्छा से गमन किया था, दैवात् इस कमल के मकरन्द में आपकी प्रति छबि को देखक-

निजं मन्नाना दयितं कथञ्चिदधुना नोत्कण्ठया धावति ।

उत्कंठोऽवनतं पुनः सहचरं दृष्ट्वा विलक्षा मुहु र्न स्थातुं नच गन्तुमत्र चतुरा भृंगी चिरं भ्राम्यति ॥ ८ ॥

शशि । इयमति प्राभातिक रामणीयकाहृतचित्त तया न मामवलोकयति । [तदुपसृत्य वन्दे इत्युपसृत्य] देवि वन्द्यसे ॥ ९ ॥

र, मेरा ही स्वामी है, ये निश्चय किया था, किंतु उत्कंठित हृदय से और पति के अन्वेषण से वहां नहीं जा सकी, इसी समय में व्यग्र चित्त होकर पति (मधुकर) को सावधान होकर आता देखकर बिस्मय पूर्वक संदिग्धा हो गई । अहा ! ये भ्रमरी यहां से न जाही सकती है न यहां रह ही सकती है, इन दोनो में से कोनसा पति है यह भी नही जान सकती है, केवल बारंबार चारो तरफ घूम रही है

शशि. । देवि तो प्रातःकाल की शोभा ही को देखकर पागल हो रही है, मोकू अभी नहीं देखा है, इस से निकट ही जाकर प्रणाम करूं (निकट जा कर) देवि । प्रणाम करती हूं ॥ ९ ॥